0

अंग्रेज शासन में उद्योग और मज़दूर

भारतीय कपड़े की प्रसिद्धि

भारत में बुना कपड़ा जग भर में प्रसिद्ध था। इंग्लैंड, फ्रांस, हॉलैंड, पुर्तगाल - सभी देशों के व्यापारी भारत का कपड़ा खरीदने आते थे। अफ्रीका, इंडोनेशिया और यूरोप, सभी जगह भारत के कपड़े की बहुत मांग थी और अच्छी बिक्री होती थी। व्यापारी खूब मुनाफा कमाते थे। पर इसका बहुत थोड़ा हिस्सा ही कपड़ा बुनने वाले बुनकरों को मिलता था। फिर भी बुनकरों के पास काम की भरमार थी। वे अपने घरों में हाथ से चलने वाले करघों पर व्यापारियों के लिए कपड़ा बुनने में लगे ही रहते थे। अमीर, ग़रीब, भारतीय, विदेशी - अलग-अलग ग्राहकों के लिए वे कई तरह के कपड़े बुनते थे।

भारतीय बुनकरों का नुकसान

मगर इंग्लैंड में 50 साल में एक ऐसा बदलाव आया जिससे दुनिया भर में भारतीय कपड़े की मांग घट गई और भारत के बुनकरों का माल बिकना कम हो गया। लगभग 1750 के बाद इंग्लैंड में कारखाने लगने लगे और मशीनों से सूत और कपड़ा बनाया जाने लगा। मशीनों से बहुत सस्ते में और बहुत अधिक मात्रा में माल तैयार होने लगा। कारखानों का बना कपड़ा बाज़ारों में बिकने आने लगा। इंग्लैंड की सरकार ने एक कानून बनाया। इस कानून के अनुसार भारत से इंग्लैंड में बिकने आने वाले कपड़े पर एक विशेष कर लगा दिया गया। भारत के कपड़े पर इंग्लैंड की सरकार ने यह कर क्यों लगाया? इंग्लैंड के लोग चाहते थे कि उनके नए-नए कारखानों को सुरक्षा मिले क्योंकि वे अभी जम नही पाए थे। भारत के कपड़े को कर लगा के महंगा कर दिया गया। इससे वहां के कारखानों के कपड़े को बाज़ार मिल पाया और कारखानों में बना कपड़ा ज़्यादा बिकने लगा। धीरे-धीरे मशीनों में सुधार हुआ और नई मशीनें बनी। इनके कारण कपड़े का उत्पादन बहुत ज़्यादा होने लगा और कपड़ा बहुत सस्ता भी हो गया।

इस तरह इंग्लैंड में भारतीय कपड़े की मांग गिरने लगी। अब इंग्लैंड के कारखाना मालिकों और व्यापारियों ने यह कोशिश शुरू की कि दुनिया भर में उनका माल बिके। इंग्लैंड के व्यापारी इंग्लैंड के कारखानों में बना कपड़ा भारत में बेचने के लिए लाने लगे। उन दिनों भारत में अंग्रेज़ों का राज्य स्थापित हो रहा था। इसलिए व्यापारियों को सरकार का सहारा भी था। उनकी कोशिशों से भारत में भी इंग्लिश कारखानों में बना कपड़ा बिकने लगा। कलकत्ता, बंबई, मद्रास जैसे शहरों के बाज़ारों में अंग्रेज़ी कपड़े का बोलबाला

इंग्लैंड में कपड़ा बिकना कम हो गया

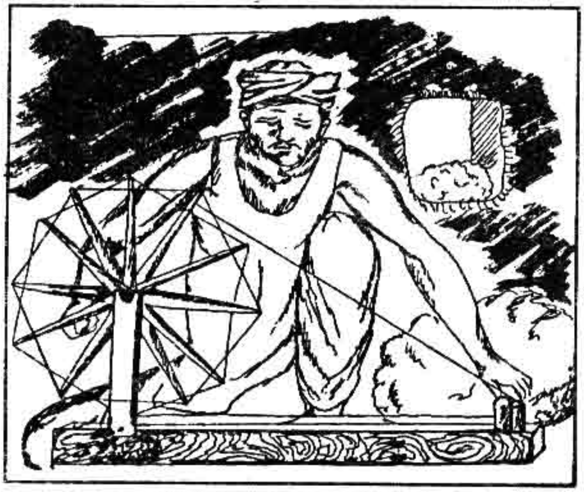

विदेशी सूत से टक्कर लेनी पड़ी

हो गया। बहुत सस्ता होने के कारण गांवों में भी यह कपड़ा बिकने लगा। इस स्थिति में भारत के ग़रीब बुनकरों के धंधे पर असर पड़ने लगा। विदेश में और देश में, दोनों ही जगह अंग्रेज़ी कारखानों के कपड़े ने उनके बहुत से ग्राहक छीन लिए।

यही नहीं, भारत के सूत कातने वालों के धंधे पर भी चोट हुई, क्योंकि कपड़े के अलावा इंग्लैंड के कारखानों में बना सस्ता, महीन सूत भी बड़ी मात्रा में भारत में बिकने आने लगा। अब बुनकर कपड़ा बुनने में यही विदेशी सूत काम में लेते और देशी जुलाहों का सूत कम खरीदते।

समय के साथ इंग्लैंड में दूसरी चीज़ें बनाने के कारखाने भी लगे। माचिस, सीमेंट, कागज़, नट-बोल्ट, बर्तन, पेन, पेंसिल घड़ियां, पिन, कंघी, साबुन, तेल - ये सभी चीज़ें इंग्लैंड से भारत में बिकने के लिए आने लगी। भारत की अंग्रेज़ सरकार अपने उपयोग की अधिकांश चीज़ें इंग्लैंड से मंगाती थी। कागज़ व स्याही से लेकर इमारतें बनाने का और रेल बनाने का बहुत सा ज़रूरी सामान इंग्लैंड से मंगाया जाता था।

यह यूरोप में औद्योगीकरण का ज़माना था। नई मशीनों से, नई तकनीक से, काम के नए तरीको से चीज़े बनाई जा रही थी। ये पुराने तरीको से बनाई गई चीज़ों की तुलना में ज़्यादा मात्रा में और ज़्यादा सस्ते में बिकने लगी।

अंग्रेज़ शासन के समय में भारतीय बुनकरों और जुलाहों के धंधे पर क्या असर पड़ा?
इंग्लैंड की बनी क्या क्या चीज़े भारत में बिकने लगीं और क्यों?

भारत में उद्योगों के विकास की उम्मीद और दिक्कतें

एक तरफ कारखानों में बनी चीज़ों की होड़ के कारण भारत के कारीगरों द्वारा पुरानी विधि से बनायी जा रही चीज़ों की मांग कम होने लगी और कारीगरों का धंधा मंदा पड़ने लगा। पर दूसरी तरफ भारत के कई सेठों, व्यापारियों व पढ़े लिखे लोगों ने सोचा कि

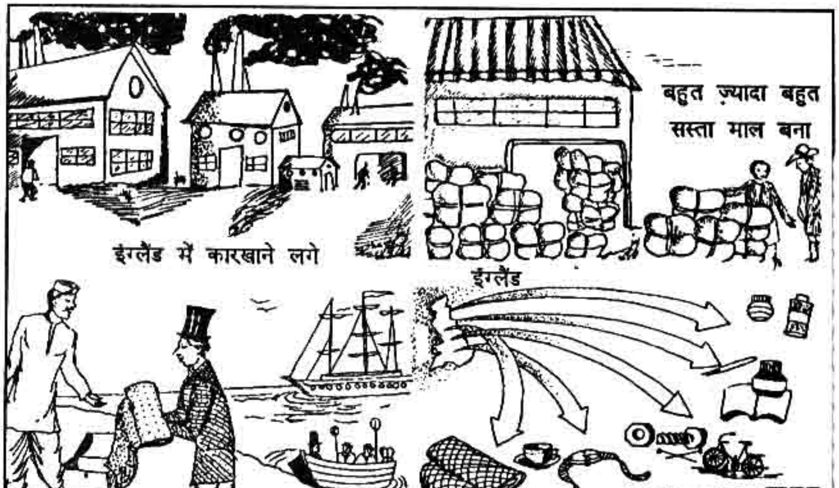

अंग्रेज़ी व्यापारी कारखानों का बना माल भारत में बेचने लाए और इंग्लैंड में बनी तरह तरह की चीज़ें भारत में बिकने लगीं।

क्यो न भारत मे ही आधुनिक कारखाने डाले जाएं और मशीनों से चीज़ें बनाई जाएं? इन लोगो के मन में एक उम्मीद जगी कि भारत के लोग इंग्लैंड की मदद से विज्ञान, तकनीक, मशीनो, कारखानों की बातें सीखेंगे और समझेंगे और जिस तरह इंग्लैंड में उद्योगों का विकास हुआ है, वैसा विकास भारत में भी होगा।

शुरू में कुछ जोशीले लोगों ने कारखाने डालने की कोशिश की, पर वे ज़्यादा सफल नही हुए। कारखाने चलाने के लिए जानकारी, अनुभव, मशीनों और धन की ज़रूरत थी। ये चीज़ें भारत में आसानी से उपलब्ध नही थीं।

यही नहीं, जो धनी भारतीय और अंग्रेज़ लोग व्यापार धंधे मे रुचि रखते थे, उनका सारा ध्यान विदेशी व्यापार में लगा हुआ था। विदेशो से बना हुआ माल लाकर भारत में बेचना और भारत का कच्चा माल विदेशो मे बेचना - यह एक बड़ा ही फायदेमंद धंधा बना हुआ था।

बड़ी-बड़ी यूरोपीय कंपनियो ने इस धंधे मे धन लगाया हुआ था और भारत के सेठ व व्यापारी भी उनकी सहायता में लगे थे।

यूरोपीय कंपनियां अफीम, नील, कॉफी व चाय के बगान लगाती और इन फसलो को उगाकर तैयार कर के पैक करती और अपने जहाज़ों से इंग्लैंड व यूरोप में बिकने भेजतीं। ये कंपनियां बंगाल में जूट और महाराष्ट्र में कपास की खरीदी करतीं और इंग्लैंड के कारखानो के लिए भेजतीं। वे बिहार व बंगाल में कोयला खदानें खोलतीं ताकि भारत में रेलगाड़ियां और स्टीमर चल सकें। रेलगाड़ियो और स्टीमरो की मदद से ही वे भारत में जगह-जगह से कच्चा माल बाहर भेज सकती थी और इंग्लैंड के कारखानो का तैयार माल भारत मे जगह-जगह बिकने के लिए पहुंचा सकती थी।

धनी लोग भारत में कारखाने डालने की बजाय विदेशी व्यापार में पैसा लगाने की सोचते थे क्योंकि इसमे फायदा निश्चित था। यह ज़रूर था कि भारत में कारखाने डालने के लिए कच्चा माल उपलब्ध था और यहां बड़ी संख्या में सस्ते मज़दूर भी मिल सकते थे। फिर भी भारत में कारखाना डालना जोखिम भरा काम लगता था।

अंग्रेज़ी कारखानो की होड़ मे भारत के कारखाने सफल हो पाएंगे इस बात का भरोसा नही हो पाता था। यही डर रहता था कि भारतीय कारखानो मे बने माल की तुलना मे इंग्लैंड से आया माल ज़्यादा

बिकेगा क्योकि वह सस्ता था। ऐसे मे अगर सरकार सहायता करती तो कुछ बात बन सकती थी।

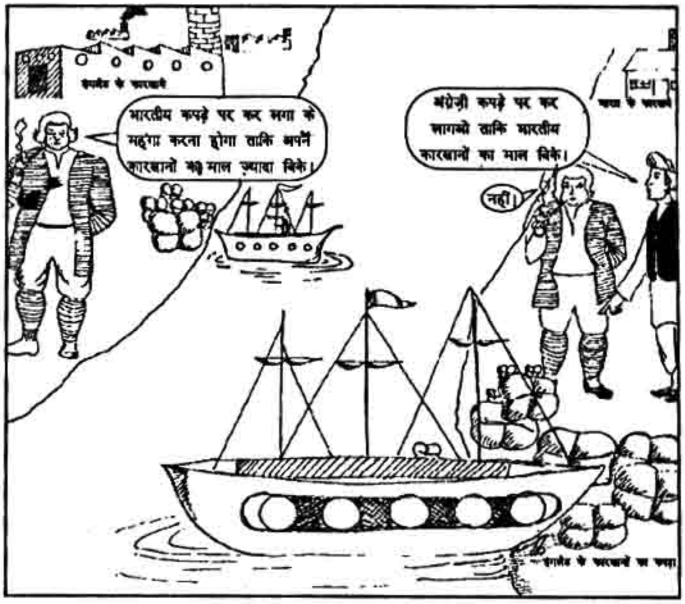

अंग्रेज़ सरकार की नीति

सन् 1850 से ही, पहले बंबई मे, और फिर अहमदाबाद मे बहुत हिम्मत के साथ कुछ कपड़ा मिलें शुरू कर दी गईं थी। इस तरह भारत में भी मशीनो से कपड़ा बनना शुरू हो गया था। पर इंग्लैंड के कपड़ों की बिक्री भारत में बहुत हो रही थी।

इस स्थिति में कई पढ़े-लिखे लोगों ने और कारखाना मालिको ने यह मांग की कि इंग्लैंड से आ रहे कपड़े पर सरकार विशेष कर लगाए ताकि भारत में बन रहे कपड़े को सुरक्षित बाज़ार मिल सके। विशेष कर लगने से अंग्रेज़ी कपड़ा भारत में महंगा बिकता और उसकी तुलना में भारतीय कारखानों में बना कपड़ा सस्ता बिकता। इस विशेष कर से भारतीय उद्योगो को बढ़ावा मिलता।

तुम जानते हो कि इंग्लैड की सरकार ने इंग्लैड के कपड़ा उद्योग की सहायता के लिए भारतीय बुनकरों के कपड़े पर कर लगाया था। पर उसी सरकार ने भारतीय उद्योगों की सहायता के लिए अंग्रेज़ी कपड़े पर ऐसा कर लगाने से इनकार कर दिया। इंग्लैंड के कारखाना मालिकों और व्यापारियों का अंग्रेज़ सरकार पर इतना दबाव था कि सरकार उनके हितो के खिलाफ कुछ नही कर पाती थी।

सन् 1896 मे भारत की अंग्रेज़ सरकार को आमदनी की सख्त कमी हुई। सरकार अपना आमदनी बढ़ाने के तरीके सोचने लगी। तब अपनी मुश्किल की घड़ी में सरकार ने भारत में आ रहे अंग्रेज़ी कपड़े पर $3\frac{1}{2}\%$ कर लगा दिया। पर इससे अंग्रेज़ी कपड़े के धंधे का नुक्सान न हो इसलिए सरकार ने तुरंत उतना ही कर ($3\frac{1}{2}\%$) भारत के कारखानो में बन रहे कपड़े पर भी लगा दिया।

यह कर भारतीय लोगों और अंग्रेज़ सरकार के बीच छिड़े लंबे झगड़े का कारण बना। भारतीय कारखानों के माल पर कर लगाकर सरकार ने यह स्पष्ट कर दिया था कि वो अंग्रेज़ी कारखानों के हितों की ही रक्षा करेगी। भारत में इस कर का कड़ा विरोध हुआ और इसे हटाने की मांग लगातार उठती रही।

> *भारत में यूरोपीय कंपनियां और भारतीय सेठों को किन-किन चीज़ों के धंधे से मुनाफा होता था?*
> *भारत में कारखाने डालने में लोगों ने क्या क्या कठिनाइयां महसूस कीं?*
> *1896 में अंग्रेज़ सरकार ने भारतीय कारखानों के कपड़े पर $3^1/_2$% कर क्यों लगाया?*

सरकार के संरक्षण के बिना भी भारत में कपड़ा, सूत, शक्कर, जूट, कागज़, माचिस, सीमेंट के कारखाने शुरू हुए। पर उनका तेज़ी से विकास 1914 के बाद ही हुआ।

विश्व युद्ध से भारतीय उद्योगों को मदद मिली

1914 से 1918 के बीच जब विश्व युद्ध छिड़ा तब कई कारणों से विदेशी माल कम मात्रा में भारत पहुंचा। एक कारण तो यह था कि माल-वाहक जहाज़ युद्ध के काम में लगा दिए गए थे, इसलिए जहाज़ों की कमी हो गई थी। यूरोप के कारखानों में भी युद्ध की ज़रूरत की चीज़ें बनने लगी थी इसलिए भारत के बाज़ार के लिए भेजा जाने वाला सामान कम मात्रा में बना।

इस तरह के हालात में भारत में जो कारखाने डले थे उनका माल बड़ी मात्रा में बिका। बिक्री तेज़ होने के प्रोत्साहन से उद्योगों में तेज़ी से विकास हुआ। युद्ध समाप्त होने के बाद भारतीय कारखानों के लिए बड़ी संख्या में यूरोप से मशीनें खरीदी गईं और नए कारखाने डाले गए। भारत के उद्योगपति बहुत ज़ोरों शोरों से यह मांग करने लगे कि सरकार विदेशी माल पर कर लगाए ताकि भारतीय माल की बिक्री अधिक बनी रहे।

सरकार को कई कारणो से यह मांग धीरे-धीरे स्वीकार करनी पड़ी। 1917 के बाद एक-एक कर के अनेको विदेशी सामानों पर कर लगे। इनकी सहायता से भारत में लगे कारखाने काफी विकास कर पाए।

> *विश्व युद्ध के समय भारतीय कारखानों का तेज़ी से विकास क्यों हुआ?*

स्वतंत्रता के समय भारतीय उद्योगों की समस्याएं

लंबे संघर्ष के बाद अंग्रेज़ सरकार की थोड़ी सहायता भारतीय उद्योगों को मिली थी। पर फिर भी कई समस्याएं बनी रहीं। बहुत अधिक संख्या में कारखाने

भारत में यूरोपीय कंपनियों का बोलाबाला था पर भारतीय कंपनियां भी आगे आने लगी

लिप्टन कंपनी	टाटा आयरन एण्ड स्टील कंपनी
एन्ड्रू यूल एण्ड कंपनी	बिड़ला मिल्स
बिनोलिया कंपनी	बेंगाल केमिकल्स
हार्वे मिल्स्	जय भारत मिल्स्
बकिंगहेम एण्ड कर्नाटिक मिल्स्	मन्नूलाल रामचंद गोपीचंद कंपनी
रॉबर्ट एण्ड रॉबर्ट कंपनी	
मदुरा कोट्स	

बैंक, जहाज़ आदि यूरोपीय सेठो व कंपनियो के हाथ मे थे, भारतीयो के हाथ में नही। यूरोपीय होने के कारण इन कंपनियों को बहुत से फायदे थे। अंग्रेज़ सरकार के सभी प्रकार के अफसरो, अधिकारियो तक उनकी पहुंच आसान थी जबकि भारतीयो की ऐसी पहुंच हो ही नही सकती थी। सारा विदेशी व्यापार इन कंपनियो के हाथ मे था इसलिए इनके पास धन की भी कमी नही थी।

हालांकि यूरोपीयो के प्रभाव के बावजूद भारतीय उद्योगपति काफी आगे बढ़े थे। कपड़ा उद्योग पर सबसे ज़्यादा भारतीय उद्योगपतियो का ही नियंत्रण था।

भारतीय उद्योगपतियो की उपलब्धि का सबसे बड़ा उदाहरण था जमशेदजी टाटा नाम के उद्योगपति द्वारा जमशेदपुर में इस्पात बनाने का कारखाना डालना।

भारतीय उद्योगों को विदेशी माल पर कर के रूप मे सरकार से थोड़ी सी सहायता तो मिली थी पर यह काफी नही थी।

उद्योगो के पूरे विकास के लिए रेल, सड़क, बिजली, कोयले, लोहे की सुविधा जितनी मात्रा में चाहिए थी, अंग्रेज़ सरकार का इस ओर उतना ध्यान नही था।

भारतीय उद्योगपतियो को कारखाने डालने के लिए सारी मशीनें विदेश से खरीदनी पड़ती थी। भारत में मशीन बनाने का उद्योग शुरू ही नही हो पाया था।

भारत मे उद्योगो के विकास के लिए वैज्ञानिको, इंजीनियरो, तकनीशियनो की मदद चाहिए थी। ये भी विदेशी लोग ही दे पाते थे क्योंकि भारत में वैज्ञानिको, इंजीनियरो की संख्या भी बहुत कम थी।

अंग्रेजो के समय में ही उद्योगपतियो के अनेक संगठन बने जिसमे फेडरेशन ऑफ इंडियन चैंबर ऑफ कॉमर्स एंड इंडस्ट्रीस (फिकी) प्रमुख था। इन संगठनो ने उद्योगपतियो की समस्याओ को लगातार सरकार के सामने रखा।

अंग्रेज़ शासन के समय मे कौन-कौन से उद्योग भारत में स्थापित हो गए थे?
स्वतंत्रता के समय भारत के उद्योगो के विकास मे क्या-क्या कठिनाइयां थी?

स्वतंत्रता के बाद

स्वतंत्र भारत की सरकार ने उद्योगों को योजनाबद्ध तरीके से बढ़ावा दिया। इस विषय के बारे में तुम दूसरे पाठ मे विस्तार से पढ़ोगे। अंग्रेज़ शासन के खत्म होने और भारतीयो की स्वतंत्र सरकार बनने से देश के औद्योगिक विकास की कई समस्याएं दूर हुई।

भारत में मज़दूरों के शुरू के दिन

औद्योगिक नगर और मज़दूरो की बस्तियां

सन् 1850 से भारत मे मशीनो वाले उद्योग खोले जाने लगे थे। सबसे बड़ा उद्योग था कपड़ा और सूत बनाने का। 1905 मे कपड़ा उद्योग मे लगभग सवा दो लाख मज़दूर काम करते थे, जूट कारखानो मे लगभग डेढ़ लाख मज़दूर थे और कोयला खदानो मे लगभग 1 लाख मज़दूर लगे थे।

उद्योगो में रोज़गार पाने की आशा ले कर गांवो से ज़रूरतमंद किसान, मज़दूर और कारीगर शहर आने लगे थे। उनके पीछे उनके गांवो से उनके रिश्तेदार, पड़ोसी, मित्र भी आते गए और शहरो मे मज़दूरो की संख्या बढ़ने लगी। कारखानो के इर्द-गिर्द मज़दूरो की झोपड़ियां और बस्तियां बनने लगीं। इस तरह कानपुर, बंबई, अहमदाबाद, कलकत्ता, मद्रास जैसे कई नगर भारत के औद्योगिक नगर बने।

काम के हालात

रोज़ पौ फटने पर मिलो मे काम शुरू हो जाता था और सूरज डूबने पर ही मशीन रुकती थी। मुंह अंधेरे ही नींद से उठ के मज़दूरो की कतार मिलो

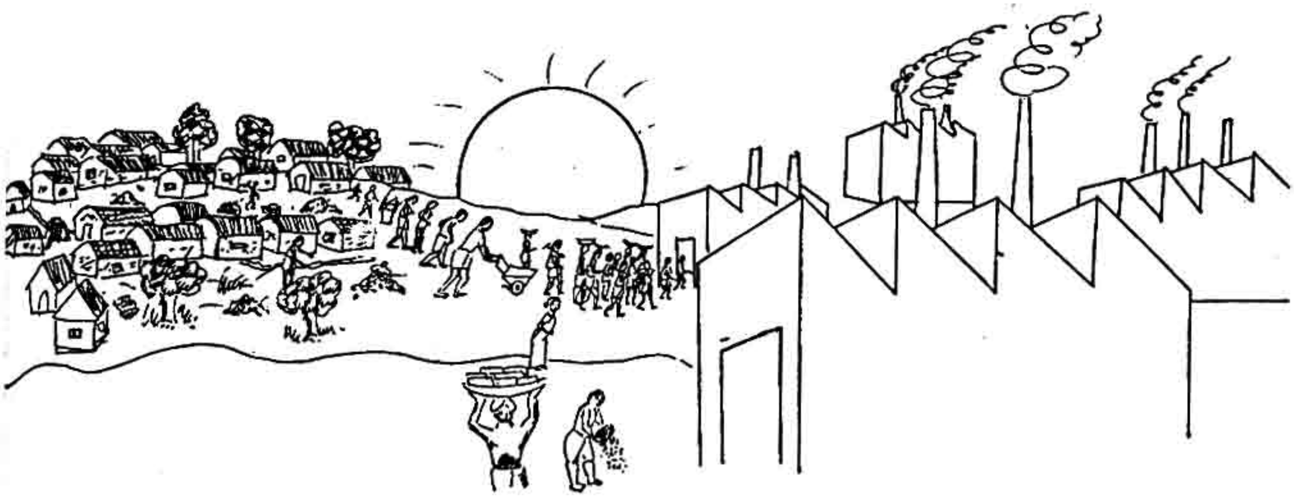

औद्योगिक नगर बने जिसमे मज़दूरों की बस्तियां खड़ी होने लगी

की ओर चल देती थी - आदमी भी और कई औरतें और बच्चे भी।

एक बार मशीन पर लगे तो बस फिर रुकने का नाम नही था। दिन भर मे खाना खाने के लिए भी कोई निश्चित अवकाश नही था। काम के बीच मे 15-20 मिनिट निकाल कर, और उतनी देर किसी दूसरे को काम संभालने की बात कह कर, मज़दूर खाना खा लेते थे। खाना खाने की कोई अलग जगह भी नही थी।

मिलों की उमस, गर्मी, शोर, धूल और घुटन में दिन भर निकल जाता। जब सूरज डूबता और अंधेरे मे दिखना बंद हो जाता तब मशीनें रुकती और छुट्टी होती।

ऐसे महीनों तक चलता था। सप्ताह में एक दिन छुट्टी रहेगी - यह नियम भी नही था। बस, साल मे आने वाले बड़े तीज त्यौहारों पर मालिक छुट्टी दे देता था।

लेकिन साल के प्रत्येक दिन काम करना तो संभव नही है। हारी बीमारी घर परिवार के काम - ये भी तो लगे रहते हैं। थकान भी होती है। ऐसे में जिस दिन मज़दूर काम पर नही पहुंचे उसकी दिन भर की पगार मारी जाती थी।

उन दिनो भुगतान भी माल के हिसाब से ही होता था। जितना माल बनाया उतना पैसा मिलेगा, यह मालिक की शर्त थी। अगर मशीन खराब हो जाए या कच्चा माल देर से मिले या कम मिले, और इन कारणों से माल कम बने - तो इसमें मज़दूर की गलती या ज़िम्मेदारी नही है। फिर भी, मालिक मज़दूरों के पैसे काट लेता था। यानी, मज़दूरों को महीने भर की कोई निश्चित आमदनी नहीं मिल पाती थी।

इतना ही नही, मालिक महीने के अंत में मज़दूरों का पूरा भुगतान भी नही करता था। अगले महीने के आखिर तक पैसे रोक के रखता था। ऐसे में मज़दूर काम छोड़कर जाना चाहें तो नही जा सकते थे - क्योंकि उनकी पिछले महीने की मज़दूरी मालिक के चगुंल मे फंसी थी।

बिजली आई और काम बढ़ा

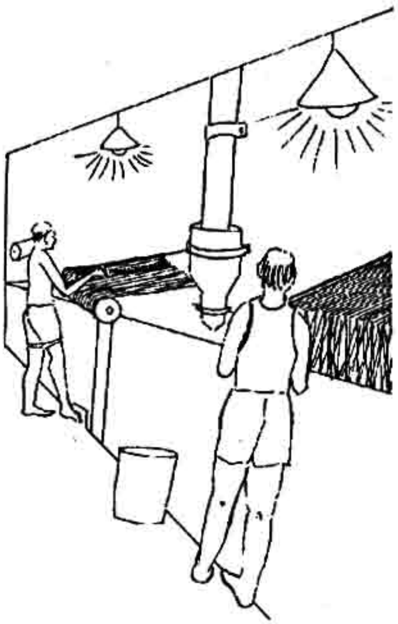

जुर्मानों का ज़ोर था। मालिक बात-बात पर मज़दूरों से जुर्माना लेता था। देर से आने पर, कपड़ा खराब हो जाने पर, मन लगा के काम नही करने पर जुर्माने होते थे और महीने की पगार में से काट लिए जाते थे।

ऐसे हालातों में औरतों, आदमियों, बच्चों - सभी को गर्मियों में 14 घंटों तक और सर्दियों में 12 घंटों तक काम करना होता था।

तब 1880 में एक नयी बात शुरू हुई। मिलों में बिजली के बल्ब लगने शुरू हुए। उजाला बढ़ा तो मज़दूरों के काम के घंटे बढ़े। अब तो सूरज डूबने पर काम रोकने की ज़रूरत नहीं थी। अब 15-15 घंटे काम लेना आम बात हो गई।

काम के दौरान इतनी सारी समस्याएं तो थीं, ऊपर से रोज़गार की कोई सुरक्षा भी नहीं थीं। मिल को घाटा होने लगे तो मालिक मज़दूरों की छंटनी कर देता था। घाटे के समय मज़दूरों के वेतन में भी कटौती कर दी जाती थी। लेकिन मुनाफा होने पर मालिक ने अपने आप मज़दूरों का वेतन बढ़ा दिया हो - ऐसा तो कभी नही होता था।

भारत में कारखानों के शुरू के दिनों में -
मज़दूरों के काम और आराम को ले कर क्या नियम थे?
मज़दूरी के भुगतान के क्या नियम थे?
मज़दूरों की आमदनी किन-कन कारणों से मारी जाती थी?
बिजली के बल्ब लगने से मज़दूरों पर क्या असर पड़ा?

मज़दूरों के संघर्ष

ऐसे बुरे काम के हालातों के खिलाफ मज़दूरों ने शुरू से ही लड़ाई छेड़ी। 1870 से ही बंबई में लगातार हड़तालें की जाने लगीं। शुरू में मज़दूरों के

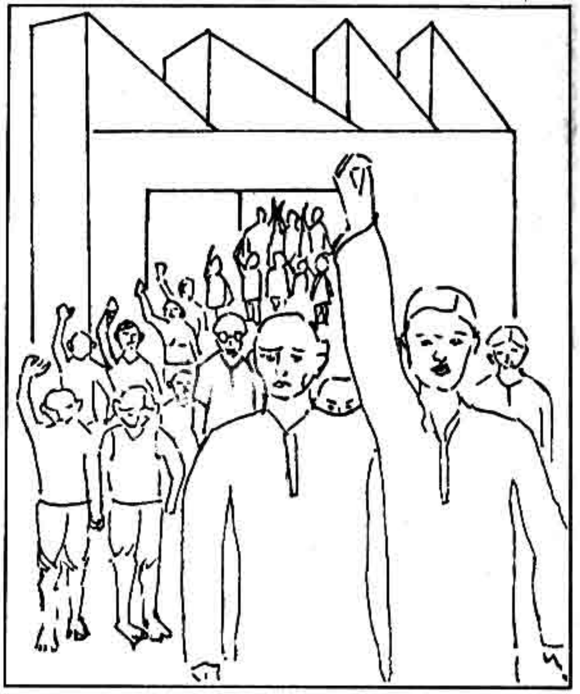

मज़दूर हड़ताल पर निकल आते

कोई संगठन या यूनियन नही बने थे। हर मिल के मज़दूर अक्सर आपस में मिल कर हड़ताल करते थे और मालिकों पर दबाव डालते थे।

जैसे 1892 में बंबई के मिल मालिक मज़दूरों के वेतन में कटौती करने की सोच रहे थे। इस स्थिति में सभी मिलों के मज़दूर संघर्ष के लिए तैयार होने लगे। सरकार ने कारखानों की जांच के लिए एक अधिकारी नियुक्त किया जो फैक्ट्री इंस्पेक्टर कहलाता था। फैक्ट्री इंस्पेक्टर ने मज़दूरों के बारे में लिखा हुआ था - "अगर वाकई पगार में कटौती की जाती है, तो बहुत संभव है कि बंबई में आम हड़ताल हो जाएगी। हालांकि मज़दूरों की कोई संगठित ट्रेड यूनियन नही है, फिर भी अधिकांश मज़दूर एक सी जात बिरादरी व गांवों के हैं और आसानी से एक जुट हो कर कदम उठाते हैं।"

मज़दूर किस तरह संघर्षशील होकर अपने हितों की रक्षा खुद करते थे, इसके कुछ उदाहरण पढ़ो।

1900-1901 में बंबई की 20 मिलो ने एक साथ मज़दूरो के वेतन में $12\frac{1}{2}\%$ की कटौती कर दी। इस कटौती की प्रतिक्रिया में 20,000 मिल मज़दूरो ने काम रोका और हड़ताल पर निकल आए। बीसो मिलें 10 दिन तक बंद रही।

इसी तरह 1919 में, जब महंगाई बढ़ रही थी और मज़दूरो की पगार नही बढ़ी थी, तब बंबई की सभी मिलो के डेढ़ लाख मज़दूर हड़ताल पर निकल आए और 12 दिन तक मिलें बंद रही।

वैसे, यह बात ध्यान देने लायक है कि मज़दूर सिर्फ अपने वेतन के लिए नही लड़े, बल्कि अंग्रेज़ो के विरुद्ध भारत की स्वतंत्रता के लिए भी लड़ते रहे।

1908 में अंग्रेज़ो ने भारत की स्वतंत्रता के लिए लड़ने वाले एक प्रसिद्ध नेता लोकमान्य तिलक को 6 साल कालापानी की सज़ा दे दी थी। इस के विरोध मे बंबई की सारी की सारी मिलो के मज़दूरों ने 6 दिन तक लगातार हड़ताल की। इस तरह मज़दूरों ने स्वतंत्रता आंदोलन मे हिस्सा लेकर कई बार हड़तालें की।

मज़दूरों के द्वारा की गई हड़तालों के कुछ कारण बताओ।

मजदूरों की समस्याओं पर विचार

अजीब बात यह थी कि शुरू मे भारत के अधिकांश पढ़े लिखे लोग मज़दूरो की हालत की तरफ ज़्यादा ध्यान नहीं दे रहे थे। उनके मन में सब से ऊपर यही चिंता रहती थी कि किसी तरह भारत में उद्योगों का विकास हो पाए। शुरू में वे इस बात की चिंता नही कर रहे थे कि उद्योगों में मज़दूरों की स्थिति कैसी होनी चाहिए।

पर सबसे अजीब बात तो यह हुई कि इंग्लैंड के कारखाना मालिक, व्यापारी और समाज सेवक लोग भारतीय मज़दूरों की हालत पर चिंता व दुख ज़ाहिर करने लगे और ज़ोर-शोर से सरकार का ध्यान उनकी तरफ खीचने लगे।

इंग्लैंड के उद्योगपति और समाज सेवक सरकार पर बहुत दबाव डालने लगे कि सरकार को भारत में मज़दूरों की हालत सुधारने के लिए वैसे ही कानून बनाने चाहिए और लागू करने चाहिए जैसे इंग्लैंड में हैं। इस दबाव के कारण सरकार सोचने लगी कि कारखानो में मज़दूरो के काम के घंटे कम करने का कानून बनाना चाहिए। मज़दूरो को अवकाश देने का कानून बनाना चाहिए।

ये बातें भारत के उद्योगपतियो और पढ़े लिखे लोगों को बहुत बुरी लगी। उन्हें लगा कि मज़दूरो को काम के निश्चित घंटे और अवकाश जैसी सुविधाएं देने से मिलों का उत्पादन कम हो जाएगा। मालिको का खर्च बढ़ जाएगा। इससे कारखानों मे बनने वाली चीज़ो के दाम बढ़ जाएंगे। इस स्थिति में इंग्लैंड से बन कर आया माल ज़्यादा आसानी से बिक पाएगा सौर भारतीय उद्योगो का विकास चौपट हो जाएगा।

भारतीय उद्योगपतियो का यह शक तो शायद ठीक ही था कि इंग्लैंड के उद्योगपति अपने स्वार्थ के लिए ही भारतीय मज़दूरो का ख्याल रखने का ढोंग कर रहे थे। इस स्थिति में भारत के पढ़े लिखे लोगों के मन में भी यह विश्वास बैठा था कि मज़दूरों के हित में कानून बनने से भारत में उद्योगों का विकास नहीं हो पाएगा। 1875 मे बंगाल के एक प्रमुख अखबार में छपी इन पंक्तियों से उन दिनों का सोच-विचार स्पष्ट होता है - "इस नए उद्योग के नाश होने से तो यह ज़्यादा अच्छा है कि मज़दूर अधिक संख्या मे मरते रहें। .... एक बार हमारे उद्योग अच्छी तरह जम जाएं, फिर हम अपने मज़दूरों के हितो की रक्षा कर सकते हैं।"

उद्योगपतियों और पढ़े लिखे लोगो के मन में डर ज़रूर था पर यह पूरी तरह ठीक नही था। भारत

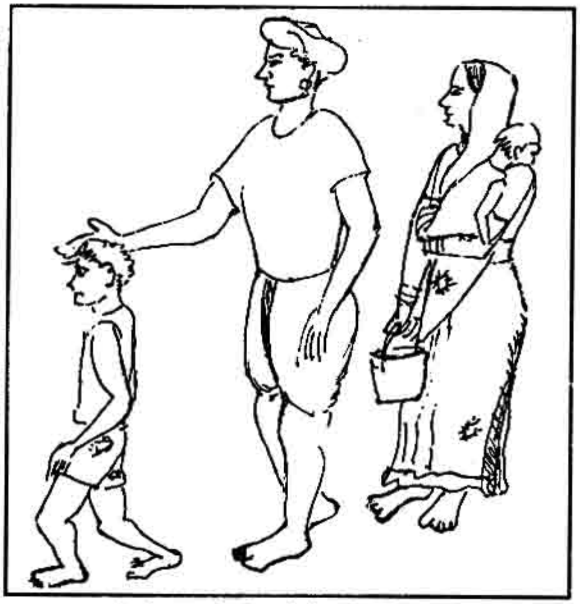

मज़दूरों मे आदमी थे, औरते भी और बच्चे भी

मे लगे कारखाने मुनाफा कमाने लगे थे। मालिक नई-नई मिलें खोल रहे थे। जैसी भी स्थिति हो मज़दूरों की हालत मे सुधार तो सबसे ज़रूरी था क्योंकि उन्ही की मेहनत के बल पर उद्योगों का विकास होना था।

मजदूरों के हित में कानून

सरकार ने 1881 मे पहला फैक्ट्री एक्ट लागू किया और मुख्य रूप से मज़दूरी करने वाले बच्चों के हित मे ये नियम बनाए

- सात साल से छोटे बच्चों को मज़दूर नही बनाया जाएगा।
- सात से बारह वर्ष के बच्चो से दिन मे नौ घंटे से ज़्यादा काम नही लिया जाएगा और उन्हें रोज़ एक घंटे का अवकाश दिया जाएगा। उन्हें महीने मे 4 दिन की छुट्टी भी दी जाएगी।

1891 मे महिला मज़दूरों के हित में नियम बने -

- महिला मज़दूरो से दिन में 11 घंटे से अधिक काम लेना मना हुआ।
- महिला मज़दूरो को दिन मे $1\frac{1}{2}$ घंटे अवकाश मिलने का नियम बना।
- बच्चों के काम के घंटे 9 से घटा कर 7 कर दिए गए और 9 साल से कम उम्र के बच्चों को मज़दूर बनाना मना हुआ।

उद्योगो में काम करने वाले मज़दूरो मे सबसे ज़्यादा संख्या पुरुष मज़दूरों की थी। उनके हित मे कानून 1911 मे जा कर ही बन पाया। 1911 के फैक्ट्री एक्ट के अनुसार -

- पुरुष मज़दूरों को 12 घंटे से अधिक काम पर रखना मना हुआ!
- हर छह घंटे के काम के बाद आधे घंटे का अवकाश मिलने का नियम बना।

इंग्लैड के उद्योगपति भारत में कारखानों के खिलाफ थे पर वे इन कारखानों के मज़दूरों का पक्ष क्यों लेते थे?

भारत के पढ़े लिखे लोग भी शुरू में कारखानों के मज़दूरों के हितों की ओर ध्यान क्यों नहीं देते थे?

मज़दूरी के कानूनों के अनुसार बच्चों, महिलाओं और पुरुषों से अधिकतम कितने घंटे काम लिया जा सकता था?

कितनी उम्र से नीचे के बच्चों को मज़दूरी पर नहीं रखा जा सकता था?

क्या तुम जानते हो कि आज कल कितनी उम्र से नीचे के बच्चों को मज़दूरी पर नहीं रखा जा सकता है?

इन कानूनो का पालन करने से उद्योगपतियों को क्या नुकसान हो सकता था?

मजदूर संगठन

समय के साथ मज़दूर वर्ग की समस्याएं सब के सामने उभर कर आईं। कुछ पढ़े लिखे लोग मज़दूरो का समर्थन करने लगे और उन्होंने मज़दूरो की समस्याएं लोगो को समझाने के लिए अखबारो मे लेख लिखने

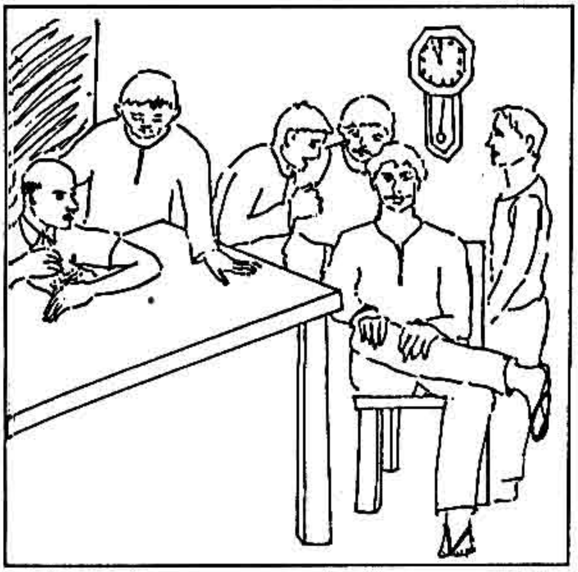

मज़दूर संगठन साल भर काम करने लगे

शुरू किए। मज़दूरों की सहायता के लिए छोटे संगठन आदि बनाने भी शुरू किए।

जब मिलों में हड़तालें होती तो हड़ताल चलाने के लिए और मालिकों से समझौता करने के लिए मज़दूरों ने पढ़े लिखे लोगों के समर्थन से अपने संगठन यानी यूनियन बनाई। धीरे-धीरे यूनियन सिर्फ हड़ताल के समय नही बल्कि साल भर, मज़दूरों के अधिकारों की देख भाल करने का काम करने लगीं। ऐसी यूनियनें 1920-25 के समय से बनने लगी। इनमें समाजवादी विचारों से प्रभावित लोग प्रमुख होने लगे। गिरनी कामगार यूनियन ऐसी एक यूनियन बनी जिसकी सहायता से 1928 में बंबई के मज़दूरों ने ज़बरदस्त हड़ताल की। अहमदाबाद में गांधीजी के प्रभाव से मज़दूर महाजन नाम की ताकतवर यूनियन बनी।

मज़दूरों के बीच यूनियन बनने से सरकार और मालिक बहुत परेशान होने लगे। अब यूनियनों व हड़तालों पर रोक लगाने के लिए कानून बनाए जाने लगे। सरकार ने मज़दूरों के कल्याण की देखभाल करने के लिए लेबर अफसर नियुक्त किए। सरकार यह कोशिश करने लगी कि मज़दूर अपनी समस्याएं सरकार के लेबर अफसर के माध्यम से सुलझाएं - यूनियन के पास न जाएं।

लेकिन यह बात मज़दूरों को स्वीकार नही थी। वे स्वतंत्र रूप से अपने संगठन बना कर अपने अधिकारों की रक्षा करना ज़्यादा ठीक समझते थे। इस तरह यूनियन व हड़ताल के अधिकार को लेकर मज़दूरों का सरकार व मालिकों के साथ संघर्ष चलता रहा

अंग्रेज़ों के समय भारत में बनने वाली दो प्रमुख मज़दूर यूनियनें कौन सी थी?
यूनियन या मज़दूर संघ मज़दूरों के लिए महत्वपूर्ण क्यों होती हैं, चर्चा करो।

स्वतंत्रता के बाद

मज़दूरों के संघर्ष खत्म नही हुए। अपने वेतन बढ़ाने, नौकरी की रक्षा करने और काम के हालातों को सुधारने के लिए आज भी आए दिन हड़तालें होती हैं, जुलूस निकलते हैं। मज़दूरों ने इस तरह के संघर्ष से अपने हित में कई नए कानून भी बनवाए हैं। पर हड़तालों और यूनियनों पर रोक लगाने के लिए भी सरकार द्वारा नए नए कानून बनाए जा रहे हैं और मज़दूर इनसे जूझ रहे हैं।

o o o o o

अभ्यास के प्रश्न

1. अंग्रेज़ शासन के समय में भारत में रेल बिछाने और लोहे व कोयले की खदाने चलाने का काम किस लिए किया जा रहा था? क्या इससे भारत में उद्योगों के विकास में मदद मिली होगी? सोच कर बताओ।
2. अगर भारत में अंग्रेज़ो का राज्य नही बनता तो क्या भारत के बुनकरों का धंधा पूरी तरह फलता फूलता रहता? समझाओ।
3. भारत के लोग अंग्रेज़ सरकार की आलोचना करते थे क्योंकि वह अपनी ज़रूरत का सारा सामान इंग्लैंड से मंगवाती थी। लोगों का कहना था कि इससे भारत में उद्योगों को बढ़ावा नहीं मिल पा रहा था।
   लोग ऐसा क्यों कहते थे - कारण समझाओ।
4. भारत के उद्योगपतियों को अंग्रेज़ सरकार से क्या दिक्कतें थी?
5. अंग्रेज़ो के शासन काल में यूरोपीय कंपनियों के लिए उद्योग लगाना ज़्यादा आसान क्यों था? दो तीन कारण लिखो।
6. जब भारत में उद्योग लगने शुरू हुए तब मजदूरों की हालत बुरी क्यो थी? 10 वाक्यों मे लिखो।
7. जब यूनियन नही बनी थी, तब भी मज़दूर अपने हितों की रक्षा के लिए क्या करते थे व कैसे?
8. मज़दूरों की यूनियनें कैसे बनीं? यूनियन बनने से मज़दूरों के जीवन मे क्या फर्क आया होगा - सोच कर बताओ।
9. सबसे पहले बाल मज़दूरों के हित में कुछ कानून बने, फिर महिला मज़दूरों के हित मे और आखिर मे पुरुष मज़दूरों के हित मे कानून बने। क्या तुम सोच सकते हो कि ऐसा क्यों हुआ होगा?
   ये कानून क्यो बनाए गए थे?